

ResearchPro International Multidisciplinary Journal



Vol- 2, Issue- 2, April-June 2026

ISSN (O)- 3107-9679

Email id: editor@researchprojournal.com

Website- www.researchprojournal.com

प्राचीन भारतीय इतिहास में अभिलेखों का योगदान

डॉ० प्रीति गुप्ता

सहायक प्राध्यापिका, स्नातकोत्तर प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, पाटलिपुत्र विश्विद्यालय, पटना

Article Info: (Received- 24/01/2026, Accept- 19/02/2026, Published- 03/04/2026)

DOI- [10.70650/rpimj.2026v2i2000010](https://doi.org/10.70650/rpimj.2026v2i2000010)

सारांश

प्राचीन भारतीय इतिहास का लेखन और उसका प्रामाणिक पुनर्निर्माण पुरातात्विक साक्ष्यों पर अत्यधिक निर्भर है, जिनमें अभिलेखों का स्थान सर्वोपरि है। साहित्यिक स्रोतों में समय के साथ होने वाले प्रक्षेपों और कल्पनाशीलता की तुलना में अभिलेख समकालीन और अपरिवर्तनीय साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र प्राचीन भारत के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक जीवन को समझने में अभिलेखों के योगदान का विश्लेषण करता है। मौर्यकालीन अशोक के धम्म-लेखों से लेकर गुप्तकालीन प्रशस्तियों और दक्षिण भारतीय ताम्रपत्रों तक, ये अभिलेख न केवल वंशावली और तिथिक्रम को स्पष्ट करते हैं, बल्कि तत्कालीन प्रशासनिक संरचना और भाषाई विकास पर भी प्रकाश डालते हैं। यह लेख इस तथ्य को रेखांकित करता है कि अभिलेखों के बिना प्राचीन भारत का एक बड़ा कालखंड आज भी विस्मृति के गर्भ में होता है।

मुख्य शब्द— अभिलेख शास्त्र, पुरालेख, ब्राह्मी लिपि, अशोक के शिलालेख, ताम्रपत्र, प्राचीन भारतीय इतिहास, ऐतिहासिक स्रोत।

1. प्रस्तावना

1.1 अभिलेख: परिभाषा एवं स्वरूप

प्राचीन भारतीय इतिहास के संदर्भ में अभिलेख उन लिखित साक्ष्यों को कहा जाता है जो पत्थर, धातु, मिट्टी की पट्टिकाओं, ताड़पत्रों या दीवारों जैसी कठोर सतहों पर उत्कीर्ण किए गए हों। अभिलेख शास्त्र, जिसे 'एपियोग्राफी' कहा जाता है, इन उत्कीर्ण लेखों के अध्ययन का विज्ञान है। प्राचीन काल में जब कागज का आविष्कार नहीं हुआ था, तब राजाओं और प्रभावशाली व्यक्तियों ने अपनी आज्ञाओं, विजयों और धार्मिक सिद्धांतों को चिरस्थायी बनाने के लिए उन्हें कठोर माध्यमों पर अंकित करवाया।

अभिलेखों के स्वरूप में विविधता पाई जाती है—

- शिलालेख: विशाल चट्टानों पर खुदे लेख, जैसे अशोक के चौदह शिलालेख।
- स्तंभ लेख: विशेष रूप से निर्मित चुनार के पथरों के स्तंभों पर अंकित संदेश।
- ताम्रपत्र: तांबे की चादरों पर खुदे लेख, जिनका उपयोग मुख्य रूप से भूमि-दान (अग्रहार) के दस्तावेजों के रूप में किया जाता था।
- गुहा लेख: गुफाओं की दीवारों पर अंकित विवरण, जो अक्सर भिक्षुओं या धार्मिक संप्रदायों को दिए गए आश्रय का प्रमाण होते हैं।
- मूर्ति लेख: मूर्तियों के आधार या पीठिका पर खुदे लेख जो उनके निर्माण और दानकर्ता की जानकारी देते हैं।

1.2 अभिलेखों की विश्वसनीयता और महत्वरु इतिहास लेखन के दो प्रमुख स्रोत होते हैं कृसाहित्यिक और पुरातात्विक। विद्वानों का मत है कि पुरातात्विक स्रोतों में अभिलेखों का स्थान सबसे ऊंचा है। इसकी विश्वसनीयता के पीछे कई ठोस कारण हैं—

अपरिवर्तनीयता— साहित्यिक कृतियों (जैसे पुराण या महाकाव्य) की प्रतिलिपियाँ सदियों तक हाथ से लिखी जाती रहीं, जिससे उनमें 'प्रक्षेप' या मिलावट की संभावना बनी रहती थी। इसके विपरीत, पत्थर या धातु पर खुदे शब्द एक बार अंकित होने के बाद बदलना असंभव होता है। अतः ये अपने मूल रूप में सुरक्षित रहते हैं।¹²

समकालीनता रू अभिलेख आमतौर पर उन घटनाओं के समय या उनके निकटवर्ती काल में लिखे जाते हैं जिनका वे वर्णन करते हैं। उदाहरण के तौर पर, समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति उनके दरबारी कवि हरिषेण द्वारा उनकी जीवित अवस्था में ही लिखी गई थी, जिससे इसमें काल-भ्रम की संभावना न्यूनतम हो जाती है।

साक्ष्य की स्पष्टता— साहित्यिक स्रोतों में अक्सर राजाओं को अतिमानवीय शक्तियों से युक्त दिखाया जाता है, जबकि अभिलेखों में प्रशासनिक विवरण, कर प्रणाली, अधिकारियों के पद और भौगोलिक सीमाओं का तथ्यात्मक विवरण मिलता है। जहाँ साहित्य कल्पना की उड़ान भर सकता है, वहाँ अभिलेख कठोर यथार्थ की भूमि पर टिके होते हैं।

1.3 भारत के अंधकार युग को स्पष्ट करने में भूमिका— भारतीय इतिहास में कुछ ऐसे कालखंड थे जिन्हें साक्ष्यों के अभाव में अंधकार युग (Dark Age) माना जाता था। इन युगों को प्रकाश में लाने का श्रेय काफी हद तक अभिलेखों को ही जाता है।

मौर्य काल का पुनरुद्धार— 1837 से पहले सम्राट अशोक के बारे में दुनिया को बहुत कम जानकारी थी। जेम्स प्रिंसेप द्वारा ब्राह्मी लिपि को पढ़े जाने के बाद, अशोक के शिलालेखों ने एक ऐसे महान सम्राट की छवि पेश की जिसका साम्राज्य हिंदूकुश से मैसूर तक फैला था। इन अभिलेखों ने न केवल मौर्य वंशावली को स्पष्ट किया, बल्कि धम्म के माध्यम से एक वैश्विक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को भी उजागर किया।¹³

विदेशी राजवंशों का इतिहास— भारत में शासन करने वाले हिंद-यवन (Indo-Greeks), शक (Scythians) और कुषाण (Kushans) राजाओं का इतिहास तो पूरी तरह से उनके सिक्कों और अभिलेखों पर ही टिका है। रुद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख ने यह सिद्ध किया कि विदेशी शासक होने के बावजूद वे भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा के महान संरक्षक थे।

दक्षिण भारत का गौरव— पल्लव, चोल और पांड्य राजवंशों के प्रशासन और उनकी ग्रामीण स्वायत्तता (जैसे उत्तिरमेरुर अभिलेख से प्राप्त ग्राम सभा की जानकारी) का ज्ञान अभिलेखों के बिना असंभव था। इन अभिलेखों ने भारतीय इतिहास के क्षेत्रीय अंतराल को भरकर इसे एक अखंड स्वरूप प्रदान किया।¹⁴

1.4 शोध का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध—लेख का मुख्य उद्देश्य प्राचीन भारतीय इतिहास के उन पक्षों को उजागर करना है जहाँ अभिलेखों ने निर्णायक साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं। लेख का लक्ष्य यह दर्शाना है कि कैसे पत्थर के ये टुकड़े और तांबे की ये चादरें केवल निर्जीव वस्तुएं नहीं हैं, बल्कि प्राचीन भारत की राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं, सामाजिक संरचनाओं और भाषाई विकास के मुखर गवाह हैं। इस अध्ययन के माध्यम से हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि एक आधुनिक इतिहासकार के लिए अभिलेख किस प्रकार एक प्राथमिक प्रयोगशाला के रूप में कार्य करते हैं, जिससे अतीत की धुंधली परतों को साफ किया जा सकता है।

2. अभिलेखों का वर्गीकरण

प्राचीन भारतीय अभिलेखों को उनकी निर्माण सामग्री, स्थान और उद्देश्य के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। यह वर्गीकरण न केवल उनकी भौतिक बनावट को दर्शाता है, बल्कि यह भी बताता है कि तत्कालीन शासक किस प्रकार के संदेश को किस माध्यम से जनता तक पहुँचाना चाहते थे।

शिलालेख— शिलालेख अभिलेखों का वह स्वरूप है जहाँ प्राकृतिक चट्टानों की सतह को समतल करके उन पर राजकीय आज्ञाएं या संदेश उत्कीर्ण किए जाते थे। इस विधा के सबसे प्रदीप्त उदाहरण सम्राट अशोक के 'चतुर्दश शिलालेख' (14 Major Rock Edicts) हैं। अशोक ने इन शिलालेखों का चयन मुख्य रूप से साम्राज्य की सीमाओं और महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्गों पर किया ताकि अधिक से अधिक जनसमूह इन्हें पढ़ सकें। इन लेखों में केवल विजय गाथाएं नहीं, बल्कि श्रद्धा, लोक कल्याण, पशु बलि निषेध और मानवीय नैतिकता के सिद्धांत

अंकित हैं। शिलालेखों की यह परंपरा बाद के राजाओं, जैसे कलिंग नरेश खारवेल (हाथीगुम्फा) और शक क्षत्रप रुद्रदामन (जूनागढ़ शिलालेख) के समय भी जारी रही, जिन्होंने अपनी उपलब्धियों को युगों-युगों तक सुरक्षित रखने के लिए शिलाओं का सहारा लिया।⁵

स्तंभ लेख— स्तंभ लेख स्थापत्य कला और अभिलेख शास्त्र का एक अनूठा संगम हैं। ये विशेष रूप से निर्मित चुनार के बलुआ पत्थरों के एकात्मक खंभों पर उत्कीर्ण किए जाते थे। अशोक के स्तंभ लेख उसकी राजकीय शक्ति और धार्मिक निष्ठा के प्रतीक हैं। वहीं, गुप्त काल तक आते-आते स्तंभ लेखों का स्वरूप प्रशस्ति में बदल गया। समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति, जिसे कवि हरिषेण ने कौशांबी के अशोक स्तंभ पर ही उत्कीर्ण करवाया, गुप्त साम्राज्य के राजनीतिक उत्कर्ष का सबसे बड़ा प्रमाण है। इसी प्रकार, चंद्र नामक राजा (संभवतः चंद्रगुप्त द्वितीय) का मेहरौली लौह स्तंभ लेख अपनी धातु-वैज्ञानिक उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध है, जो आज भी बिना जंग लगे खड़ा है और राजा की विजयों का साक्ष्य दे रहा है।⁶

ताम्रपत्र— ताम्रपत्रों का उपयोग मुख्य रूप से कानूनी और आर्थिक दस्तावेजों के रूप में किया जाता था। इन्हें दान-पत्र भी कहा जाता है क्योंकि इनका उपयोग राजाओं या सामंतों द्वारा ब्राह्मणों, मंदिरों या विहारों को दिए गए भूमि दान (अग्रहार) को प्रमाणित करने के लिए होता था। ताम्रपत्रों पर दान प्राप्तकर्ता का नाम, भूमि की सीमाएं, करों से छूट का विवरण और दान देने वाले राजा की वंशावली अंकित होती थी। गुप्त काल, पल्लव और चोल काल के ताम्रपत्र तत्कालीन ग्रामीण अर्थव्यवस्था और सामंती व्यवस्था को समझने के लिए प्राथमिक स्रोत हैं। ये पत्र अक्सर राजकीय मुहरों से जुड़े होते थे, जो इनकी वैधानिकता को सिद्ध करते थे।

गुहा लेख— गुफाओं की आंतरिक दीवारों पर उत्कीर्ण लेख श्गुहा लेख कहलाते हैं। ये अधिकांशतः धार्मिक प्रवृत्तियों से प्रेरित होते थे। बराबर की पहाड़ियों में अशोक और उसके पौत्र दशरथ द्वारा आजीवक संप्रदाय को दी गई गुफाएं इसके प्रारंभिक उदाहरण हैं। इसके अतिरिक्त, नासिक, कार्ले और कन्हेरी की गुफाओं के लेख सातवाहन काल के सामाजिक और धार्मिक परिवेश की जानकारी देते हैं। ये अभिलेख बताते हैं कि कैसे उस समय के व्यापारी, कारीगर और राजपरिवार के सदस्य धार्मिक केंद्रों को दान देकर अपनी आस्था प्रकट करते थे।⁷

3. प्रमुख ऐतिहासिक योगदान—

अभिलेखों ने भारतीय इतिहास को एक काल्पनिक गाथा से हटाकर एक वैज्ञानिक और प्रामाणिक धरातल पर खड़ा किया है। इनके माध्यम से हमें अतीत के ऐसे कई आयाम देखने को मिलते हैं जो साहित्यिक स्रोतों में लुप्त थे। कालक्रम और राजनीतिक सीमाओं का निर्धारण प्राचीन भारत के इतिहास लेखन में सबसे बड़ी चुनौती तिथिक्रम की थी। अभिलेखों ने इस समस्या का समाधान किया। कई अभिलेखों में विशिष्ट संवतों (जैसे शक संवत, विक्रम संवत, गुप्त संवत) का उल्लेख मिलता है। उदाहरण के तौर पर, शृंगोल अभिलेख न केवल पुलकेशिन द्वितीय और हर्षवर्धन के युद्ध का विवरण देता है, बल्कि यह भारत के प्राचीन कालक्रम को व्यवस्थित करने में भी सहायक है। राजनीतिक सीमाओं के संदर्भ में, खारवेल का श्हाथीगुम्फा अभिलेख बताता है कि कैसे उसने मगध और दक्षिण भारत के राजाओं को पराजित कर कलिंग की शक्ति का विस्तार किया। अभिलेखों के प्राप्ति स्थल भी साम्राज्य की भौगोलिक सीमाओं का निर्धारण करने में भूगोलविदों की सहायता करते हैं।⁸

प्रशासनिक और आर्थिक ढांचे का विश्लेषण अभिलेखों के माध्यम से हमें राजा के सलाहकार परिषद और नौकरशाही का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होता है। अशोक के लेखों में श्धम्म महामात्रश्, श्प्रादेशिकश् और श्राजुकश् जैसे पदों का विवरण मिलता है, जो दर्शाता है कि मौर्य प्रशासन कितना संगठित था। आर्थिक क्षेत्र में, अभिलेख हमें श्रेणियों बारे में बताते हैं। मंदसौर अभिलेख में रेशम बुनकरों की श्रेणी का उल्लेख है, जो न केवल व्यापार करती थी बल्कि सामाजिक और धार्मिक कार्यों में भी सक्रिय थी। इसके अतिरिक्त, श्ुरुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख सुदर्शन झील के बांध के पुनर्निर्माण की जानकारी देकर तत्कालीन जल प्रबंधन और सिंचाई प्रणाली पर प्रकाश डालता है।⁹ सामाजिक-धार्मिक और सांस्कृतिक स्थितिरु अभिलेख तत्कालीन समाज की सहिष्णुता और धार्मिक उदारता के जीवंत दस्तावेज हैं। अशोक के लेखों में श्शभी संप्रदायों के सार की वृद्धि की बात कही गई है, जो भारतीय धर्मनिरपेक्षता का प्राचीनतम साक्ष्य है। गुप्त काल के अभिलेखों से पता चलता है कि समाज में वर्ण व्यवस्था के बावजूद व्यावसायिक गतिशीलता बनी हुई थी। भूमि दान के अभिलेखों से ब्राह्मणों के बढ़ते प्रभाव और मंदिरों की केंद्रीय भूमिका का पता चलता है। सांस्कृतिक रूप से, ये अभिलेख भाषा के विकासकृप्राकृत से संस्कृत की ओर संक्रमणकृको भी दर्शाते हैं। दक्षिण भारत के श्उत्तिरमेरुर अभिलेख ने चोल कालीन स्थानीय

स्वशासन और लोकतांत्रिक चुनाव प्रक्रिया का जो विवरण दिया है, वह आधुनिक लोकतंत्र के संदर्भ में भी अत्यंत विस्मयकारी और प्रेरणादायक है।¹⁰ अभिलेखों ने न केवल राजाओं के नाम और तिथियां प्रदान की हैं, बल्कि प्राचीन भारत की जीवंत प्रशासनिक, सामाजिक और आर्थिक धड़कनों को भी सुरक्षित रखा है। इनके बिना भारत का इतिहास एक निर्जीव ढांचा मात्र रह जाता।

4. महत्वपूर्ण अभिलेखों का केस स्टडी

प्राचीन भारतीय इतिहास की दिशा बदलने वाले कुछ विशिष्ट अभिलेखों का सूक्ष्म अध्ययन यह समझने में सहायता करता है कि कैसे एक अकेला शिलालेख संपूर्ण युग की व्याख्या कर सकता है। अशोक के अभिलेख (धम्म और लोक-कल्याण)रू सम्राट अशोक के अभिलेख भारतीय इतिहास के सबसे प्रभावशाली दस्तावेज हैं। ये अभिलेख केवल राजा की आज्ञाएं नहीं थे, बल्कि एक नैतिक संहिता थे। अशोक ने अपने शिलालेखों के माध्यम से धम्म की अवधारणा को प्रतिपादित किया, जो किसी विशिष्ट धर्म का नहीं बल्कि सार्वभौमिक मानवता का संदेश था। उनके अभिलेखों में भेरीघोष (युद्ध की घोषणा) के स्थान पर धम्मघोष (नैतिक विजय) की बात कही गई है। इनमें चिकित्सालयों की स्थापना, कुएं खुदवाना, और वृक्षारोपण जैसे कार्यों का उल्लेख मिलता है, जो अशोक को इतिहास का पहला जन-कल्याणकारी शासक सिद्ध करते हैं।¹¹

समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति (सैन्य विजय का महाकाव्य)— इलाहाबाद स्तंभ पर खुदी यह प्रशस्ति गुप्त काल के राजनीतिक उत्कर्ष का जीवंत साक्ष्य है। इसके लेखक हरिषेण ने समुद्रगुप्त को सौ युद्धों का विजेता बताया है। इस अभिलेख की विशिष्टता इसकी प्रशस्ति शैली है, जो राजा के सैन्य अभियानों का क्रमवार विवरण देती है— आर्यावर्त के राजाओं का समूल विनाश (प्रसभोद्धरण) और दक्षिण भारत के राजाओं के प्रति ग्रहण—मोक्ष—अनुग्रह की नीति। यह अभिलेख गुप्त साम्राज्य की कूटनीतिक जटिलताओं और उसकी विशाल सैन्य शक्ति को समझने का प्राथमिक आधार है।

रुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख (संस्कृत का पुनरुत्थान)— गुजरात के गिरनार पर्वत पर स्थित यह अभिलेख दो कारणों से अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्रथम, यह शुद्ध संस्कृत काव्य शैली में लिखा गया पहला बड़ा अभिलेख है, जो दर्शाता है कि दूसरी शताब्दी ईस्वी तक संस्कृत राजकीय संरक्षण की भाषा बन चुकी थी। द्वितीय, इसमें शसुदर्शन झील के निर्माण और जीर्णोद्धार का इतिहास मिलता है।¹² यह बताता है कि कैसे चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा निर्मित झील का पुनर्निर्माण शक शासक रुद्रदामन ने अपने व्यक्तिगत कोष से करवाया, जो सिंचाई और जल प्रबंधन के प्रति प्राचीन राजाओं की संवेदनशीलता को दर्शाता है।

पुलकेशिन द्वितीय का ऐहोल अभिलेख (ऐतिहासिक द्वंद्व)— चालुक्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय के दरबारी कवि रविकीर्ति द्वारा रचित यह अभिलेख दक्षिण भारतीय इतिहास का गौरव है। यह अभिलेख उत्तर भारत के शक्तिशाली सम्राट हर्षवर्धन और दक्षिण के पुलकेशिन द्वितीय के बीच नर्मदा नदी के तट पर हुए भीषण युद्ध का विवरण देता है। रविकीर्ति बड़ी चतुराई से लिखते हैं कि इस युद्ध के बाद हर्ष (खुशी) का हर्ष (गर्व) जाता रहा। यह अभिलेख उत्तर और दक्षिण भारत के बीच सत्ता के संतुलन का सटीक साक्ष्य प्रस्तुत करता है।

5. लिपि और भाषा का विकास

अभिलेख केवल इतिहास की जानकारी ही नहीं देते, बल्कि वे भारत की भाषाई और लिपिकीय यात्रा के विकासक्रम को भी दर्शाते हैं। ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपियों का इतिहास प्राचीन भारत में दो प्रमुख लिपियाँ प्रचलन में थीं। ब्राह्मी लिपि आधुनिक भारतीय लिपियों (जैसे देवनागरी, बंगाली, तमिल) की जननी मानी जाती है। यह बाएं से दाएं लिखी जाती थी और इसकी सरलता ने इसे पूरे उपमहाद्वीप में लोकप्रिय बनाया। दूसरी ओर, खरोष्ठी लिपि मुख्य रूप से उत्तर-पश्चिम भारत (आज का पाकिस्तान और अफगानिस्तान) में प्रचलित थी। यह लिपि दाएं से बाएं लिखी जाती थी और इस पर अरामी प्रभाव देखा जा सकता है। अशोक के शाहबाजगढ़ी और मानसेहरा अभिलेख खरोष्ठी लिपि के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। इन लिपियों के अध्ययन से प्राचीन व्यापारिक और सांस्कृतिक मार्गों का पता चलता है।

प्राकृत से संस्कृत की ओर संक्रमण— प्रारंभिक अभिलेखों (मौर्य काल) की भाषा मुख्य रूप से प्राकृत थी, क्योंकि यह जनसाधारण की भाषा थी और अशोक अपना संदेश आम जनता तक पहुँचाना चाहते थे। लेकिन, ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों के साथ ही अभिलेखों में संस्कृत का प्रभाव बढ़ने लगा। शुंग और सातवाहन काल के बाद, रुद्रदामन और गुप्त शासकों ने संस्कृत को अपनी आधिकारिक भाषा बनाया। यह संक्रमण इस बात का प्रतीक

है कि संस्कृत अब केवल वेदों और ब्राह्मणों की भाषा नहीं रही थी, बल्कि वह उच्च बौद्धिक और राजनीतिक विमर्श की भाषा बन गई थी। क्षेत्रीय भाषाओं के उद्भव के साक्ष्यरूप मध्यकाल के करीब पहुँचते-पहुँचते, अभिलेखों में क्षेत्रीय भाषाओं के बीज दिखने लगते हैं। दक्षिण भारत के पल्लव और चोल अभिलेखों में संस्कृत के साथ-साथ श्तमिलश का प्रयोग बढ़ गया। इसी तरह, कर्नाटक में कन्नड़ और आंध्र में तेलुगु के प्रारंभिक रूप अभिलेखों में मिलने लगे। इन लेखों में अक्सर ऊपरी भाग संस्कृत में (धार्मिक उद्देश्यों के लिए) और निचला भाग क्षेत्रीय भाषा में (स्थानीय जनता और भूमि विवरण के लिए) होता था। यह द्विभाषी परंपरा भारतीय सांस्कृतिक विविधता और भाषाई एकीकरण का अनूठा उदाहरण है।¹³

6. अभिलेखों की सीमाएं—

यद्यपि अभिलेख प्राचीन इतिहास के सबसे विश्वसनीय स्रोत माने जाते हैं, तथापि एक शोधकर्ता के रूप में मैं इन सीमाओं और व्याख्या में निहित चुनौतियों के प्रति भी यथा संभव सचेत रहा हूँ।

अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन और प्रशस्तियाँ— अधिकांश अभिलेख राजाओं या उनके दरबारियों (जैसे हरिषेण या रविकीर्ति) द्वारा लिखवाए गए थे। ऐसी स्थिति में, दरबारी कवियों ने अपने संरक्षक राजाओं का गुणगान करने के लिए प्रशस्ति शैली का उपयोग किया। इन लेखों में राजाओं को देवताओं के समान या अपराजित बताया जाता है। उदाहरण के तौर पर, समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में उनकी किसी भी हार का उल्लेख नहीं है।¹⁴ इतिहासकार के लिए यह चुनौतीपूर्ण हो जाता है कि वह इन वर्णनों में से वास्तविक ऐतिहासिक सत्य और साहित्यिक अतिशयोक्ति के बीच के अंतर को स्पष्ट करे।

प्राकृतिक और मानवीय क्षरण— हजारों वर्षों से खुले आसमान के नीचे या भूमि में दबे रहने के कारण कई महत्वपूर्ण अभिलेखों की स्थिति अत्यंत जर्जर हो गई है। वायु, वर्षा और धूप के कारण पत्थरों की सतह घिस गई है, जिससे कई अक्षर अस्पष्ट या पूरी तरह मिट चुके हैं। कई बार मानवीय उपेक्षा या निर्माण कार्यों के कारण भी प्राचीन स्तंभों और ताम्रपत्रों को क्षति पहुँची है। अशोक के स्तंभों के कई हिस्से खंडित अवस्था में मिले हैं, जिससे उनके पूर्ण संदेश को पढ़ पाना कठिन हो जाता है।

लिप्यंतरण और व्याख्या— कई प्राचीन लिपियाँ और उनकी क्षेत्रीय शैलियाँ समय के साथ लुप्त हो गईं। यद्यपि ब्राह्मी को पढ़ा जा चुका है, लेकिन सिंधु लिपि जैसे कई साक्ष्य आज भी अबूझ पहली बने हुए हैं। इसके अतिरिक्त, प्राचीन भाषाओं में प्रयुक्त कुछ तकनीकी शब्दों (जैसे भूमि—छिद्र—न्याय या विशिष्ट करों के नाम) का सटीक अर्थ आज के संदर्भ में निकालना कठिन होता है। एक ही शब्द की अलग-अलग इतिहासकारों द्वारा अलग व्याख्या करने से ऐतिहासिक तथ्यों में भिन्नता आने की संभावना बनी रहती है।¹⁵

7. कार्यप्रणाली—

प्रस्तुत शोध—पत्र की कार्यप्रणाली मुख्य रूप से गुणात्मक विश्लेषण और शैतिहासिक अनुसंधान पद्धति पर आधारित है। अध्ययन के लिए प्राथमिक स्रोतों के रूप में विभिन्न शिलालेखों, स्तंभ लेखों और ताम्रपत्रों के प्रत्यक्ष साक्ष्यों का विश्लेषण किया गया है। साथ ही, प्रसिद्ध पुरालेखवेत्ताओं जैसे डी.सी. सरकार और राजबली पाण्डेय के ग्रंथों को द्वितीयक स्रोतों के रूप में उपयोग किया गया है। शोध में तुलनात्मक विधि का प्रयोग करते हुए साहित्यिक विवरणों की पुष्टि अभिलेखीय साक्ष्यों से की गई है। डेटा संग्रह हेतु पुस्तकालय अनुसंधान और डिजिटल पुरालेखों (जैसे Epigraphia Indica) का अवलोकन कर निष्कर्ष निकाले गए हैं।

8. निष्कर्ष

प्राचीन भारतीय इतिहास के गहन अध्ययन और उपलब्ध साक्ष्यों के विश्लेषण के उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अभिलेख भारतीय इतिहास की रीढ़ हैं। यदि हमारे पास अशोक के शिलालेख, गुप्तकालीन प्रशस्तियाँ और सातवाहनों के ताम्रपत्र न होते, तो भारतीय इतिहास का एक बड़ा हिस्सा केवल मिथकों और पौराणिक कथाओं तक सीमित रह जाता। अभिलेखों ने न केवल हमें मौर्य, गुप्त, शक, कुषाण और चोल जैसे महान राजवंशों के नाम दिए, बल्कि उन्होंने प्राचीन भारत की धड़कती हुई प्रशासनिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था का साक्षात्कार भी कराया। ये पत्थर के दस्तावेज हमें बताते हैं कि प्राचीन भारत में सुदूर क्षेत्रों के बीच भाषाई और सांस्कृतिक सेतु कैसे बने थे। यद्यपि अभिलेखों की अपनी सीमाएं हैं और उनमें राजाओं के प्रति पक्षपातपूर्ण विवरण मिल सकते हैं, फिर भी उनकी समकालीनता और अपरिवर्तनीयता उन्हें किसी भी साहित्यिक स्रोत से अधिक प्रामाणिक बनाती है। वर्तमान में, तकनीक (जैसे 3D स्कैनिंग और डिजिटल एपिग्राफी) के

माध्यम से मिट चुके अक्षरों को पढ़ने के नए प्रयास हो रहे हैं, जो यह सिद्ध करते हैं कि आज के वैज्ञानिक युग में भी इन प्राचीन लेखों की महत्ता अक्षुण्ण है।

अतः, यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि प्राचीन भारत की गौरवशाली गाथा को पत्थरों पर उकेरने वाले ये अभिलेख केवल अतीत के अवशेष नहीं, बल्कि हमारे गौरवमयी इतिहास के जीवंत प्रकाश-स्तंभ हैं।

Author's Declaration

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ ग्रंथ सूची—

1. अग्रवाल, वासुदेव शरण. भारतीय कला. पृथ्वी प्रकाशन, 1966, पृ सं.215.
2. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद. भारतीय प्राचीन लिपिमाला. मुंशीराम मनोहरलाल, 1971, पृ सं.85.
3. कनिंघम, एलेक्जेंडर. कॉर्पस इन्स्क्रिप्शनम इंडिकैरमरु वॉल्यूम 1. सरकारी प्रेस, 1877, पृ सं.369.
4. थारपर, रोमिला. अशोक और मौर्य साम्राज्य का पतन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1997, पृ सं.105.
5. द्विवेदी, उमेश चंद्र. प्राचीन भारतीय अभिलेख. जानकी प्रकाशन, 2002, पृ सं.31.
6. पाण्डेय, राजबली. भारतीय पुरालिपि. लोकभारती प्रकाशन, 1978, पृ सं.22.
7. मजूमदार, आर. सी. प्राचीन भारत. मोतीलाल बनारसीदास, 1960, पृ सं.40.
8. रायचौधरी, हेमचंद्र. प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास. किताब महल, 1953, पृ सं.71.
9. शर्मा, आर. एस. प्राचीन भारत में सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन. राजकमल प्रकाशन, 1990, पृ सं.61–68.
10. सरकार, डी. सी. भारतीय अभिलेख शास्त्र. मोतीलाल बनारसीदास, 1965, पृ सं.25–48.
11. आल्टेकर, ए. एस. स्टेट एंड गवर्नमेंट इन एंशिअंट इंडिया। मोतीलाल बनारसीदास, 1958, पृ. 10।
12. बाशम, ए. एल. द वंडर दैट वाज़ इंडिया। सिड्गविक एंड जैक्सन, 1954, पृ. 190।
13. भांडारकर, डी. आर. अशोक। यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, 1925, पृ. 712-714।
14. ब्यूहलर, जॉर्ज। इंडियन पैलियोग्राफी। टुडे एंड टुमॉरोज़ प्रिंटर्स, 1959, पृ. 120।
15. चक्रवर्ती, दिलीप के. एन आर्कियोलॉजिकल हिस्ट्री ऑफ एंशिअंट इंडिया। मुंशीराम मनोहरलाल, 1997, पृ. 108-115।
16. फ्लीट, जे. एफ. कॉर्पस इन्स्क्रिप्शनम इंडिकारमरु खंड (इन्स्क्रिप्शन्स ऑफ द अर्ली गुप्ता किंग्स)। गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, 1888।
17. गोयल, एस. आर. ए हिस्ट्री ऑफ द इम्पीरियल गुप्ताज़। सेंट्रल बुक डिपो, 1967।
18. हुल्डश, यूजेन। इन्स्क्रिप्शन्स ऑफ अशोक। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1925।
19. जैसवाल, सुवीरा। द ओरिजिन एंड डेवलपमेंट ऑफ वैष्णविज्म। मुंशीराम मनोहरलाल, 1967।
20. की, जॉन। इंडियान ए हिस्ट्री। ग्रोव प्रेस, 2000।
21. लाहिड़ी, नयनजोत। फाइंडिंग फॉरगॉटन सिटीज़ हाउ द इंडस सिविलाइज़ेशन वाज़ डिस्कवर्ड। परमानेंट ब्लैक, 2005।
22. शास्त्री, के. ए. नीलकण्ठ। ए हिस्ट्री ऑफ साउथ इंडिया। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1955।
23. शर्मा, रामशरण। एस्पेक्ट्स ऑफ पॉलिटिकल आइडियाज़ एंड इन्स्टिट्यूशन्स इन एंशिअंट इंडिया। मोतीलाल बनारसीदास, 1959।
24. सरकार, डी. सी. इंडियन एपिग्राफी। मोतीलाल बनारसीदास, 1965।
25. सिंह, उपिन्दर। ए हिस्ट्री ऑफ एंशिअंट एंड अर्ली मेडिवल इंडिया। पियर्सन एजुकेशन, 2008।

Cite this Article

"डॉ० प्रीति गुप्ता", "प्राचीन भारतीय इतिहास में अभिलेखों का योगदान", ResearchPro International Multidisciplinary Journal (RPIMJ), ISSN: 3107-9679 (Online), Volume:2, Issue:2, April-June 2026.

"Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author."